उपन्यास

रानी कमलापति

बलराम धाकड़

रानी कमलापति
बलराम धाकड़

शिवना प्रकाशन

रानी कमलापति
(उपन्यास)

बलराम धाकड़

शिवना प्रकाशन

मूल्य : 250.00 रुपये

ISBN: 978-93-81520-83-3
प्रथम पैपरबैक संस्करण : 2022 © बलराम धाकड़

Rani Kamlapati
By Balram Dhakar

मुद्रक : थॉमसन प्रेस (इंडिया) प्रा.लि., नई दिल्ली

शिवना प्रकाशन
पी. सी. लैब, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट
बस स्टैंड, सीहोर -466001(म.प्र.)
फोन : +91-7562405545
मोबाइल : +91-9806162184 (शहरयार)
ईमेल : shivna.prakashan@gmail.com

प्रकाशक / लेखक की अनुमति के बिना पुस्तक या इसके किसी अंश को संक्षिप्त, परिवर्धित कर प्रकाशित करना, फ़िल्म बनाना क़ानूनन अपराध है।

सर्मपण

माँ और पिताजी को
(श्रीमती गिरिजा देवी – श्री बाबु लाल धाकड़)

प्राक्कथन

कहते हैं, ऐतिहासिक उपन्यास लिखना एक जोखिम से भरा काम है क्योंकि इसमें या तो इतिहास मर जाता है या फिर उपन्यास। दोनों के साथ न्याय करना कठिन होता है। अपने पहले ही उपन्यास में यह जोखिम लेने का साहस इसलिए कर पा रहा हूँ क्योंकि मुख्य कथानक में वर्णित यह क्षेत्र मेरी जन्मभूमि और कर्मभूमि दोनों ही रहा है। इसी क्षेत्र में पटवारी की नौकरी के दौरान स्थानीय बुजुर्गों से प्रचलित लोक-कथाओं में गोंड राजाओं और उनके वैभव की कहानियाँ सुनने को मिलती रही थीं। इन्हें लिपिबद्ध करने का मन बहुत पहले से था।

ऐतिहासिक उपन्यास लिखने से पूर्व उसमें वर्णित ऐतिहासिक स्थलों का भ्रमण आवश्यक होता है। रानी कमलापति से संबन्धित ऐतिहासिक स्थलों में गिन्नौरगढ़ का किला और भोपाल स्थित कमलापति महल ही ज्ञात हैं। गिन्नौरगढ़ का किला रखरखाव के अभाव में वर्तमान में खण्डहरनुमा हो चुका है। महान गोंडवाना के वैभव के साक्ष्य यहाँ बिखरे पड़े हैं। कमलापति महल, भारतीय पुरातत्त्व सर्वेक्षण विभाग द्वारा संरक्षित होने से अच्छी स्थिति में है। इसकी कला और स्थापत्य आज भी रानी कमलापति-कालीन गौरव के साक्षी हैं। भोजेश्वर शिवालय, वर्तमान रायसेन जिले के भोजपुर का प्राचीन शिव मंदिर है जो महान प्रतापी राजा भोज और परमारकालीन वैभवमयी स्थापत्य-शैली का अप्रतिम उदाहरण है।

आलमशाह के बाड़ी स्थित किले को भी निकट से देखा। इसे पहले भी कई बार देखा था किन्तु तब दृष्टि इस ओर नहीं थी। प्रसन्नता का विषय है कि सम्प्रति इस किले में आदिवासी छात्रावास संचालित है। किले से पूर्व दिशा की ओर कुछ ही दूरी पर माँ हिंगलाज का प्राचीन मंदिर आज भी क्षेत्रवासियों की आस्था का केन्द्र है। चौकीगढ़ का किला बाड़ी से लगभग बीस किलोमीटर की दूरी पर सिंघौरी अभ्यारण्य में स्थित है। भोपाल के इस्लामनगर में दोस्त मुहम्मद ख़ान का किला अब भी बेहतर स्थिति में है।

भोपाल-सीहोर और रायसेन के गजेटियर्स से उपन्यास के मुख्य पात्रों के विषय में महत्त्वपूर्ण जानकारी प्राप्त हुई। इनके अतिरिक्त रामभरोस अग्रवाल की पुस्तक ‘गोंड जाति का सामाजिक अध्ययन: गोंड, संस्कृति, इतिहास’ से गोंड संस्कृति और उनकी राजवंश परम्परा को समझने में सहायता मिली। मध्यप्रदेश के प्रसिद्ध इतिहासकार डॉ. सुरेश मिश्र के विविध गोंड साहित्य से गोंडवाना के गौरवशाली इतिहास और तत्कालीन प्रशासनिक व्यवस्था की जानकारी सुलभ हो सकी।

भोपाल स्थित मध्यप्रदेश जनजातीय संग्रहालय तथा आदिम जातीय अनुसंधान और विकास संस्थान में समेटी-सहेजी गई आदिवासियों की धरोहर से दृष्टि में उनके गौरवपूर्ण अतीत का चित्र साकार हो सका। इस कार्य में अनुसंधान अधिकारी श्रीमती माधुरी यादव

जी का विशेष सहयोग मिला। उपन्यास के पात्र, कथानक और उप-कथानकों पर विमर्श के अतिरिक्त दुर्गम-ऐतिहासिक स्थानों के भ्रमण में सहयोग हेतु मित्रों- सर्वश्री एकान्त, आलोक, शैलेंद्र, राजकुमार, हेमराज, गोविंद जी एवं आदरणीया रक्षा दुबे जी का धन्यवाद! प्रेरणास्रोत और मार्गदर्शक आदरणीय मिथिलेश वामनकर जी का विशेष आभार! कात्यायनी और अद्वैत कृष्ण के प्रति उनके अहैतुक प्रेम और समर्पण से अभिभूत हूँ।

अन्त में– 'रानी कमलापति' एक ऐतिहासिक उपन्यास है जिसके मुख्य पात्र, स्थान, घटनाएँ व कथानक ऐतिहासिक हैं। कथानक की लयबद्धता के लिए रचनात्मक स्वतन्त्रता ली गई है।

- बलराम धाकड़

1

सलकनपुर राज्य के दरबार में राजा रामचन्द्र रतौलिया अपने सिंहासन पर चिंतामग्न मुद्रा में विराजमान थे। राज्य के दीवान और अन्य अधिकारी अपने-अपने आसनों पर सिर झुकाए बैठे थे। राज्य की आर्थिक स्थिति और सामरिक असुरक्षा की समस्या पर किसी को कोई उपाय नहीं सूझ रहा था। दीवान जी कुछ कहने के लिए अपने स्थान पर खड़े ही हुए थे कि द्वारपाल ने भीतर आकर राजा आलमशाह के संदेशवाहक के आने की सूचना दी। राजा रामचन्द्र ने स्वीकृति में सिर हिला दिया।

कुछ ही क्षण पश्चात सलकनपुर राज्य के उत्तर-पूर्व में स्थित बाड़ी और चौकीगढ़ राज्य के गोंड राजा आलमशाह का संदेशवाहक दरबार में उपस्थित हुआ। राजा रामचन्द्र को यथायोग्य अभिवादन कर उसने पत्र आदर सहित दीवान जी के हाथ में सौंप दिया। राजा के परिचारक उसे जल-पान कराने के लिए दरबार के बगल में स्थित अतिथि कक्ष में ले गए।

दीवान जी ने बढ़कर पत्र राजा साहब की ओर बढ़ाया तो उन्होंने कहा, "दीवान जी! आप लोगों से कुछ भी छुपा नहीं है। आप निश्चिंत होकर पत्र पढ़िये।"

दीवान जी ने पत्र पढ़ना आरंभ किया। औपचारिक अभिवादन के बाद पत्र का संक्षेप कुछ इसप्रकार था, "सलकनपुर राज्य इस समय मराठा, निजाम और दूसरे अनेक विधर्मी आक्रांताओं की आँखों में चुभ रहा है। गिन्नौरगढ़ के राजा और हमारे काकाश्री निजामशाह किसी भी क्षण आप पर आक्रमण कर सकते हैं। आक्रमण का कारण केवल सलकनपुर राज्य की सामरिक स्थिति ही नहीं बल्कि आपकी षोडशी और सुंदर राजकुमारी कमलापति जी भी हो सकती हैं। ऐसी विकट परिस्थिति में आपके राज्य और राजकुमारी कमलापति जी की सुरक्षा का आजीवन दायित्व लेने के लिए राजा आलमशाह प्राण-पण से तैयार हैं। आप अवगत ही होंगे कि हैदराबाद के निजाम हमारे मित्र हैं और प्रत्येक परिस्थिति में हमें सहायता करने को तत्पर हैं। कृपया संदेशवाहक को अपने उत्तर से अवगत करा दें जिससे भविष्य की रूप-रेखा तैयार की जा सके।"

दरबार में उपस्थित प्रत्येक को यह समझने में देर न लगी कि पत्र में विवाह प्रस्ताव के अस्वीकार पर युद्ध का आह्वान भी था। चिंता में डूबे राजा रामचन्द्र पर मानो विपत्ति का पहाड़ टूट पड़ा हो। आलमशाह अपनी क्रूरता, व्यसन और लंपटपने के कारण पड़ोसी राज्यों तक में कुख्यात था। उसकी कुदृष्टि राजकुमारी कमलापति पर थी। विवाहित होने पर भी उसका यह विवाह प्रस्ताव अस्वीकार करना राजा रामचन्द्र के लिए सहज नहीं था। उन्होंने गहरी साँस ली, माँ विजयासन देवी का स्मरण किया और दीवान जी की ओर कातर दृष्टि से देखा जो स्वयं ही भविष्य की आशंकाओं-कुशंकाओं से भयभीत थे। फिर भी किसी तरह स्वयं को संयत कर बोले, "महाराज, सबसे पहले तो हमें इस विपत्ति को कुछ समय के लिए टालने का प्रयास करना चाहिए। हम राजा आलमशाह को संदेश दें कि विवाह जैसे

महत्त्वपूर्ण विषय पर अपने बड़े-बुजुर्गों और परिजनों से विमर्श हेतु हमें दो दिन का समय दिया जाए।''

राजा को दीवान जी की बात ठीक लगी। अन्य अधिकारियों ने भी हामी भरी तो इस आशय का पत्र संदेशवाहक को देकर उसे ससम्मान विदा किया गया। उसे कुछ उपहार भी दिए गए जिससे वह आलमशाह की नाराजगी को कम करने में यथाशक्ति सहायता कर सके।

संदेशवाहक के विदा होने पर दीवान जी ने राजा रामचन्द्र से निवेदन किया, ''महाराज ! इस विषय पर यदि महारानी जी और राजकुमारी कमलापति से पहले चर्चा कर ली जाए तो उत्तम होगा।''

''आप उचित ही कहते हैं दीवान जी ! हम इस विषय पर आज ही उनसे चर्चा करेंगे फिर प्रातः आपसे विमर्श करेंगे। उसके पश्चात ही किसी निर्णय पर पहुँचना उचित होगा।'' कहते हुए राजा रामचन्द्र अपने आसन से उठे और दरबार से बाहर चले गए। वे अपने रनिवास की ओर तेज कदमों से बढ़ रहे थे।

महारानी के महल में पहुँचकर उन्होंने परिचारिका को अपने आने का संदेश भी नहीं देने दिया। वे सीधे ही रानी के कक्ष में प्रवेश कर गए। संयोग से राजकुमारी कमलापति भी कक्ष में उपस्थित थी। वह अपनी रानी माँ की चोटी गूँथ रही थी। उसकी सबसे निकटस्थ और विश्वासपात्र सखी सरीखी परिचारिका दुलारी बाई निकट ही खड़ी थी। महाराज को प्रवेश करते देख कमलापति एक ओर हट गई और उन्हें प्रणाम किया। राजा रामचन्द्र ने स्नेह से उसके सिर पर हाथ रखा और पलंग पर बैठ गए। उनकी भाव-भंगिमा देख माँ और बेटी दोनों को किसी आसन्न संकट का भान हो गया।

रानी ने उनके निकट ही चौकी पर बैठते हुए कहा, ''सब कुशल तो है महाराज ! आपका स्वास्थ्य कुछ ठीक नहीं लग रहा है।''

''स्वास्थ्य तो ठीक है महारानी ! किन्तु सलकनपुर एक युद्ध के मुहाने पर खड़ा दिखाई दे रहा है।''

''वो कैसे पिताश्री ? विस्तार से कहिए।'', पास ही खड़ी राजकुमारी ने प्रश्न किया जो इस आयु में भी राज्य के राजनीतिक मामलों से पूरी तरह परिचित हो चुकी थी।

''आलमशाह ने संदेश भेजा है कि या तो हम आपका विवाह उससे कर दें या फिर युद्ध के लिए तैयार हो जाएँ।''

''फिर आपने क्या निश्चय किया, महाराज ?'', अब रानी ने जिज्ञासा की।

''उस धूर्त दुजवर (पूर्व विवाहित) से राजकुमारी के विवाह का तो प्रश्न ही नहीं है। हमें युद्ध लड़ना होगा।''

''किन्तु पिताश्री ! सलकनपुर राज्य इस समय युद्ध के लिए तैयार नहीं है। हमें कोई ऐसा मार्ग ढूँढना होगा जिससे साँप भी मर जाए और लाठी भी न टूटे।'', कमलापति ने कुछ

सोचते हुए कहा।

"ऐसा भला क्या मार्ग हो सकता है बेटा ! आलमशाह बहुत कपटी और लंपट है। वो ऐसे ही नहीं मानेगा।", महाराज के स्वर में बेचैनी थी।

"हम जानते हैं पिताश्री ! वो हमसे पहले भी प्रणय निवेदन कर चुका है। हमने इन्कार कर दिया तो उसने विवाह का प्रस्ताव भेजा है किन्तु हम न तो उसके सामने आत्म-समर्पण करेंगे और न ही उससे विवाह।"

"फिर भला युद्ध के अलावा और क्या मार्ग शेष रह जाता है ?"

राजकुमारी कमलापति ने एक क्षण को अपनी आँखें मूँदीं जैसे किसी पारलौकिक सत्ता से कुछ पूछ रही हो। गहरी साँस छोड़ते हुए धीरे से आँखें खोलीं और महाराज से बोली, "हमें शीघ्र ही किसी ऐसे राजा को विवाह प्रस्ताव भेजना होगा जिसके संबंधी होने पर आलमशाह कभी सलकनपुर पर आक्रमण न कर सके और वह राज्य भी हमारे प्रस्ताव को अस्वीकार न करे।"

"ऐसा भला कौन सा राज्य है, कमलापति ?", राजा रामचन्द्र ने अधीर होकर पूछा था।

कुछ निश्चय करके राजकुमारी बोली, "हमें गिन्नौरगढ़ के राजा को अपना विवाह प्रस्ताव भेजना चाहिए।"

रानी माँ ने पहले आपत्ति उठाई, "क्या ! राजा निजामशाह ! उनकी तो पहले से ही दो रानियाँ हैं। हम तुम्हारा विवाह उनसे कैसे कर सकते हैं पुत्री ?"

महाराज ने बात आगे बढ़ाई, "हाँ पुत्री ! हम अपने राज्य के हित में तुम्हारा जीवन बर्बाद नहीं कर सकते।"

"यह आप क्या कह रहे हैं पिताश्री ? यह आप कैसे कह सकते हैं कि राजा निजामशाह के साथ हमारा जीवन बर्बाद हो जाएगा। वह भी केवल इसलिए कि वे पहले से विवाहित हैं। कदाचित आप भूल रहे हैं कि द्रोपदी आदि अन्य पत्नियाँ होने पर भी श्री कृष्ण ने अपनी बहन सुभद्रा का विवाह अर्जुन से करवाया था। यह भी एक सामान्य विवाह संबंध होगा जिसके वैसे ही राजनीतिक और कूटनीतिक निहितार्थ भी होंगे। आलमशाह, राजा निजामशाह का भतीजा है। दो गढ़ों का स्वामी होने पर भी वो उनसे अधिक शक्तिशाली नहीं है। घनिष्ठ संबंधी होने पर वह चाहकर भी सलकनपुर पर आक्रमण नहीं कर सकेगा। यदि कभी उसने ऐसी धृष्टता करने का साहस भी किया तो उसे पहले गिन्नौरगढ़ का प्रतिकार सहना होगा।"

राजकुमारी की दूरदृष्टि और तर्कयुक्त निश्चय का राजा रामचन्द्र और रानी माँ के पास कोई विकल्प नहीं था। दोनों ने बढ़कर राजकुमारी कमलापति को अपने हृदय से लगा लिया। कक्ष में देर तक रानी माँ की सिसकियाँ गूँजती रहीं और महाराज ढेरों आशीष राजकुमारी पर बरसाते रहे। संवेदनाओं का ज्वार रात्रि पर्यंत चढ़ता-उतरता रहा।

भोर होने से कोई दो घड़ी पहले ही दुलारी बाई ने सदैव की भाँति राजकुमारी कमलापति

के प्रसाधन कक्ष में जल और वस्त्र इत्यादि की व्यवस्था कर दी। कल देर रात्रि तक राजकुमारी, महाराज और रानी माँ के कक्ष में ही थी और उसे चर्चा का अवसर नहीं मिल सका था। राजकुमारी के विवाह संबंधी निर्णय को लेकर दुलारी के मन में ऐसे कई प्रश्न थे जिनके उत्तर वह राजकुमारी से चाहती थी। स्नानादि के उपरांत जब राजकुमारी कमलापति दैनिक पूजन के लिए माँ विजयासन देवी के मंदिर जाने को हुईं तो दुलारी ने उन्हें एक ओर खींच लिया।

"क्या हुआ सखी ? सब कुशल तो है ?", राजकुमारी ने पूछा।

"अब तक तो सब कुशल है, राजकुमारी जी। किन्तु आगे भी सब कुशल रहे इसलिए आपसे कुछ अनिवार्य चर्चा करनी है।", दुलारी ने धीरे से कहा।

"हम देवी माँ के मंदिर साथ ही तो चल रहे हैं। मार्ग में चर्चा होती रहेगी।", कहते हुए कमलापति अपनी रथनुमा बग्घी की ओर बढ़ गई। दुलारी थोड़ा ठिठककर कुछ सोचते हुए बग्घी में चढ़ गई। फिर सारथी की ओर देखकर बाद में चर्चा करने का संकेत कर मौन बैठी रही। देवी माँ के मंदिर की पहाड़ी के निकट पहुँचकर बग्घी रुक गई। यहाँ से पैदल ही पहाड़ी चढ़नी होती थी। राजकुमारी और दुलारी अपने हाथ में पूजन-सामग्री के थाल लिए मंदिर की ओर चल पड़ीं। बग्घी के साथ आए दो सैनिकों ने उनके साथ आना चाहा तो राजकुमारी ने उन्हें वहीं प्रतीक्षा करने का आदेश दिया।

जब वे दोनों बग्घी से कुछ दूरी पर पहुँचीं तो कमलापति ने पूछा, "महल में क्या चर्चा करने को मरी जा रही थी तू ?"

"राजकुमारी जी ! क्षमा करना आपको सलाह देना सूरज को दिया दिखाने जैसा है किन्तु आपने मुझे सखी कहा है। सो अपना धरम समझकर आपसे कुछ कह रही हूँ। मेरी बात का कोई और मतलब मत निकाल लेना।", दुलारी जैसे अपनी राजकुमारी से अभयदान चाहती हो।

"अरी तू कब से इतनी औपचारिक हो गई। जान की आमान दूँ तब अर्ज करेगी क्या ?", कमलापति ने अपनी प्रिय सखी से परिहास किया।

"लगता है, कल आपने भाव के आवेग में महाराज और रानी माँ के सामने अपना विवाह प्रस्ताव गिन्नौरगढ़ भेजने का निर्णय कर लिया। आपको खबर है, राजा निजामशाह की आयु आपसे दुगनी है।", दुलारी ने अपना संकोच तोड़ते हुए पूछा।

दुलारी के प्रश्न से कमलापति के चेहरे की मुस्कान गंभीरता में बदल गई, "हम जानते हैं, सखी। किन्तु विवाह में केवल आयु ही नहीं देखी जाती। और यह तुझे क्यों लगा कि हमारा निर्णय भावावेश में लिया गया है।"

"ओह ! आयु नहीं देखी जाती तो और क्या देखा जाता है ?"

"कुल-कुटुंब की मर्यादा, माता-पिता का संतोष, अपनी प्रजा का सुख और उनकी सुरक्षा भी। और भी बहुत कुछ।"

“राजकुमारी जी ! अभी आपका राज अभिषेक नहीं हुआ है जो प्रजा की चिन्ता में दुबली हो रही हैं। अपनी सुंदरता तो देखिये और विचार कीजिए, पहले से विवाहित उस अधेड़क राजा से आपको क्या सुख मिलेगा ?”, दुलारी ने अपनी चिन्ता प्रकट कर दी।

“केवल राजा ही प्रजा की चिन्ता करे और राज्य के नागरिक निपट स्वार्थ में लगे रहें, यह तो नैतिकता भी न हुई। प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य है कि एक-दूसरे की चिन्ता और सहयोग करें तभी राज्य उन्नति करता है। और सखी ! विवाह का पहला उद्देश्य धर्म पालन का अवसर प्रदान करना है, सुख तो पशु भी प्राप्त कर लेते हैं। फिर एक राजा, एक ऋषि और एक कवि के सुख में अंतर होता है। सभी के सुख का साधन एक ही तो नहीं हो सकता।”, पहाड़ी की चढ़ाई चढ़ते हुए कमलापति ने अपनी चिरपरिचित शैली में विश्लेषण किया।

“तनिक अवसर मिला नहीं कि व्याख्यान देने लगती हैं आप। एक प्रश्न का सच-सच उत्तर दीजिए। यदि आलमशाह का प्रस्ताव न आया होता, क्या तब भी आप राजा निजामशाह से विवाह कर लेतीं ?”, चढ़ाई से दुलारी की साँसे फूल रही थीं।

“तब का तब देखा जाता। अभी तो यही निर्णय अपनी प्रजा और महाराज पिताश्री के सम्मान और प्राणों की रक्षा कर सकता है।”

“किन्तु यह विवाह एक समझौता होगा, सखी।”

“यदि हम ऐसा सोचेंगे तो अवश्य होगा। किन्तु हमारे लिए यह कोई समझौता नहीं बल्कि एक अवसर है- अपनी प्रजा और माता-पिता के लिए अपने स्वार्थ के त्याग और बलिदान का। ऐसा अवसर केवल एक स्त्री को ही मिलता है दुलारी, वह भी सौभाग्य से।”

“किन्तु हर बार अपने माता-पिता और राज्य की सुरक्षा के लिए एक स्त्री ही त्याग और बलिदान क्यों करे ? फिर उसके समर्पण के बदले इस समाज ने उसे दिया ही क्या है ? क्या ‘यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते’ जैसी उक्तियाँ ही सदियों से अपना कर्तव्य निभाती आई स्त्री का उचित पारितोषिक हैं ? क्या वह इससे अधिक की अधिकारिणी नहीं है ?”, दुलारी की चिन्ता अब पीड़ा में बदल चुकी थी। वह जैसे स्त्री-मात्र की ओर से प्रश्न पूछ रही थी।

“सखी ! इस संसार में जितनी भी अव्यवस्था और विक्षोभ है, उसका कारण यही है कि हमारा ध्यान अपने अधिकारों पर है, कर्तव्यों पर नहीं। भारतवर्ष की गौरवमयी स्त्रियों ने किसी पारितोषिक या पारिश्रमिक के बदले अपना बलिदान नहीं दिया। वह तो उनका विशुद्ध त्याग और समर्पण था। जिसमें प्रतिफल की आशा हो, वह त्याग नहीं, त्याग का पाखण्ड है। व्यापार है। गीता के निष्काम कर्मयोग को केवल पढ़ ही नहीं लेना है, हममें से प्रत्येक को इसका पालन भी करना है। आज हमें अवसर मिला है, कल तुम्हें भी मिलेगा।”, राजकुमारी कमलापति कहते-कहते अब मंदिर की सीढ़ियों तक आ गई थी। दुलारी ने सब सुना तो ध्यान से किन्तु वो राजकुमारी से सहमत न हो सकी। उसने अपना थाल मंदिर के चबूतरे पर रखा और फिर राजकुमारी के हाथों से भी थाल लगभग झटकते हुए उसी के

पास रख दिया। कमलापति के हाथ अपने हाथों में लेकर बोली, "सखी ! ठीक से विचार कर लो। मैं आपसे अधिक नहीं जानती। किन्तु मुझे यह विवाह उचित नहीं लग रहा है।"

कहते हुए दुलारी ने अपना माथा कमलापति के हाथों पर रखा और फूट-फूटकर रोने लगी। उसकी ऐसी गति देख कमलापति की आँखें भी भर आईं किन्तु उसे धीरज बँधाते हुए बोली, "चुप हो जा सखी ! मैं जानती हूँ, तेरा मुझसे प्रेम ही यह सब कहलवा रहा है। देवी माँ पर विश्वास रख। जो हमारे लिए श्रेयस्कर है, वही होगा।"

देवी माँ की ओर जाती हुई कमलापति का हाथ पकड़कर दुलारी ने कहा, "ठीक है। अब कुछ न कहूँगी किन्तु एक वचन दो- कभी खुद से दूर तो नहीं करोगी न, राजकुमारी जी ?"

कमलापति ने बढ़कर दुलारी को अपने हृदय से लगा लिया। उसका माथा चूमकर बोली, "कभी नहीं। मृत्युपर्यंत नहीं।"

दोनों सखियों का आत्मिक प्रेम और नेह देख मंदिर का वृद्ध पुजारी देवी माँ के सामने हाथ जोड़े भाव-विह्वल होता रहा। उसकी आँखों में अकुलाहट के बादल घुमड़ रहे थे मानो उसने भविष्य देख लिया हो।

2

वास्तव में सलकनपुर कोई सौ गांवों का एक समूह मात्र था जिनके मुक़द्दम और पटेलों ने मिलकर एक सरकार गठित की और रामचन्द्र को अपना राजा स्वीकार लिया। यह निजामशाह के पिता राजा शंकरशाह ही थे जिन्होंने न केवल सबसे पहले सलकनपुर राज्य को मान्यता प्रदान की बल्कि अन्य राज्यों को भी उन्हें राजा के रूप में स्वीकारने के लिए मना लिया था।

गिन्नौरगढ़ साढ़े सात सौ ग्रामों का एक तत्कालीन विशाल राज्य था। गोंडवाना के महान प्रतापी राजा संग्रामशाह के अधीन बावन गढ़ों में गिन्नौरगढ़, बाड़ीगढ़ और चौकीगढ़ भी थे। रानी दुर्गावती की पराजय और वीरगति के बाद उनके देवर चंद्रशाह ने इन तीनों समेत कुल दस गढ़ मुग़ल बादशाह अकबर को भेंट किए थे। मुग़ल काल में गिन्नौरगढ़, बाड़ीगढ़ और चौकीगढ़ पर निजामशाह के पूर्वज अकबर के करद (कर देने वाले राजा) थे। औरंगजेब के अंतिम दिनों में जब मुग़ल सल्तनत कमजोर पड़ी तो राजा शंकरशाह और उनके बड़े पुत्र जीवनशाह ने विद्रोह कर स्वयं को स्वतंत्र राजा घोषित कर दिया। उस समय निजामशाह की आयु बहुत कम थी। जीवनशाह की असामयिक मृत्यु के बाद उनके पुत्र आलमशाह और भाई निजामशाह में राज्य को लेकर होने वाले संभावित टकराव को टालने के लिए राजा शंकरशाह ने बाड़ी और चौकीगढ़ आलमशाह को दे दिए और गिन्नौरगढ़ निजामशाह को। परंतु आलमशाह अपने पिता जीवनशाह के प्रयासों से प्राप्त राज्य पर स्वयं का ही एकमेव अधिकार मानता रहा और निजामशाह का भतीजा होते हुए भी उन्हें अपना शत्रु। निजामशाह ने अपनी कृषि नीति से गिन्नौरगढ़ को बहुत समृद्ध कर लिया था। इसके विपरीत आलमशाह दिन-रात स्त्री, मदिरा, चौसर और शिकार के व्यसन डूबा रहता था। परिणाम यह हुआ कि दो गढ़ों का राज्य मिलने के उपरांत भी उसकी शक्ति और समृद्धि गिन्नौरगढ़ से उन्नीस ही बैठती थी। निजामशाह से उसकी ईर्ष्या के लिए यह कारण पर्याप्त था। राजा रामचन्द्र इस परिदृश्य से भलीभाँति परिचित थे।

अगले दिन राजा रामचन्द्र ने दीवान जी को अपने निजी कक्ष में बुलवा लिया। वे आलमशाह को कुछ भी अनिष्ट करने का अवसर नहीं देना चाहते थे। राजकुमारी कमलापति के सुझाए मार्ग को सुनकर दीवान जी की आँखें भर आईं। भारी मन से उन्होंने हाँ में हाँ मिला दी। वे भलीभाँति जानते थे कि इस संकट से बचने का कोई अन्य मार्ग नहीं है किन्तु जो विकल्प राजकुमारी कमलापति ने चुना था उसमें राजकुमारी के अतिरिक्त सभी का कल्याण सुनिश्चित था। सबकी सहमति से गिन्नौरगढ़ के राजा निजामशाह को विवाह प्रस्ताव हेतु पत्र लिखा गया। प्रस्ताव लेकर स्वयं दीवान जी प्रतिनिधि के रूप में रवाना हुए।

दस कोस की यात्रा पूरी कर दीवान जी दोपहर तक गिन्नौरगढ़ पहुँचे। उन्हें राजा

निजामशाह के विशिष्ट अतिथि कक्ष में सम्मानसहित बैठाया गया। कुछ देर के बाद राजा ने उन्हें अपने महल में बुलवा लिया। निजामशाह महल के अपने निजी कक्ष में विशाल शाही तख़्त पर आराम कर रहे थे। सलकनपुर के दीवान जी को भीतर आते हुए देखा तो दूर से ही मुस्कुरा दिए। उनकी मनोहारी मुस्कान से दीवान जी की यात्रा की थकान जाती रही। उन्होंने राजा निजामशाह को पहली बार इतने निकट से देखा था। गोरा रंग। ऊँचा कद। बलिष्ठ शरीर। चौड़े कंधे। और रौबदार मूंछें। सब मिलकर उन्हें एक राजसी और आकर्षक छवि प्रदान कर रहे थे।

दीवान जी ने झुककर अभिवादन किया और विवाह प्रस्ताव आदर सहित निजामशाह को सौंप दिया। पढ़ते ही राजा निजामशाह को अचरज हुआ। उन्होंने राजकुमारी कमलापति के रूप, गुण और सौंदर्य का यशोगान सुन रखा था। उन्हें विश्वास नहीं हुआ कि राजा रामचन्द्र ने उन्हें अपना जमाता बनने का प्रस्ताव भेजा है। संदेह हुआ तो उन्होंने दीवान जी से पूछ लिया, “सब ठीक तो है, दीवान जी? हम आपकी राजकुमारी कमलापति के व्यक्तित्व से परिचित हैं। वे निश्चित ही हमसे अधिक योग्य वर की अधिकारिणी हैं। कहीं यह विवाह प्रस्ताव किसी विवशता का परिणाम तो नहीं है ?”

दीवान जी, राजा निजामशाह की दूरदर्शिता पर मुग्ध हो गए लेकिन बोले, “नहीं महाराज ! आपसे संबंध जोड़ना तो सलकनपुर राज्य के लिए गौरव का विषय है। हमें तो चिंता इस बात की है कि आप सलकनपुर और राजकुमारी जी को इस योग्य समझते हैं अथवा नहीं ?”

“नहीं दीवान जी ! यह तो हमारा सौभाग्य है जो आपके राजा रामचन्द्र जी ने हमें इस योग्य समझा। यह माँ की कृपा का ही परिणाम है। हम तो माँ विजयासन देवी के भक्त और राजकुमारी कमलापति जी के सद्गुणों के पुजारी हैं। किन्तु एक खटका है। क्या राजकुमारी जी को यह ज्ञात है कि हम पूर्व से विवाहित हैं ?”

“जी हाँ, महाराज ! वास्तव में यह प्रस्ताव उन्हीं के सुझाव पर आपकी सेवा में प्रेषित किया गया है।”

सुनकर राजा निजामशाह के मन को संतोष हुआ और अपने भाग्य पर अभिमान। उन्होंने दीवान जी के हाथों ढेर सारे उपहार भेजकर धन्यवाद सहित विदा किया।

निकटतम शुभ लग्न देखकर विवाह का मुहूर्त निश्चित हुआ और निश्चित मुहूर्त पर राजा निजामशाह बारात लेकर सलकनपुर पहुँच गए। सलकनपुर के अधिकांश नागरिकों के लिए यह हर्ष और उल्लास का क्षण तो था लेकिन दबी जुबान में यह चर्चा भी चलती रही कि यह विवाह दो आत्माओं और परिवारों का मेल न होकर एक दुरभिसंधि है जो आलमशाह के ताप से बचने के लिए सलकनपुर की विवशता का परिणाम है।

जो भी हो, राजा रामचन्द्र ने राजाओं के मध्य अपनी विशिष्ट छाप भले ही न छोड़ी हो लेकिन वे अपनी प्रजा के हृदय में बसते थे। राजकुमारी कमलापति तो जैसे सारी प्रजा की

ही बेटी थीं। गिन्नौरगढ़ का सलकनपुर में ऐसा भव्य स्वागत हुआ जैसे शबरी की कुटिया में राम आ गए हों। द्वार-द्वार वंदनवार सजाए गए। पूरे रास्ते बारातियों पर पुष्पों की वर्षा होती रही। संसाधन कम किन्तु भाव स्पंदन असीम। घर छोटे किन्तु हृदय विशाल। यूँ तो गिन्नौरगढ़ वालों ने गोंडवाना का स्वर्णकाल भी देखा था किन्तु इतना सत्कार और आत्मीयता उनकी स्मृतियों में कहीं अंकित न थी। यह स्वागत उन्हें जीवनभर याद रहने वाला था और वे इस बात से परिचित थे।

विवाह मंडप में राजा निजामशाह ने अपनी होने वाली जीवनसंगिनी राजकुमारी कमलापति को पहली बार देखा। निजामशाह ने सोचा, श्वेतकमलवत रंग के कारण ही इनका नाम कमलापति रखा गया होगा। लालिमा लिए गोरा रंग। मध्यम कद। संतुलित काया और कमलनयना। लाल रंग और सुनहरे कोर की जड़ीदार नौवारी साड़ी में कमलापति का सौन्दर्य देवताओं को भी मोहित करने वाला था। आज निजामशाह को अपने भाग्य पर इतराने का मन हो रहा था।

विवाह की सभी रस्में पूरी होने के बाद जब बारात नववधू कमलापति को लेकर विदा हुई तो सलकनपुर की प्रजा का वात्सल्य और प्रेम उमड़ पड़ा। सलकनपुर और गिन्नौरगढ़ ने शायद ही ऐसी विदाई कभी देखी हो। महाराज पिताश्री और रानी माँ से लेकर राज्य के प्रत्येक नागरिक ने बेटी की विदाई का असीम दुख महसूस और सहन किया। राजकुमारी कमलापति भी सभी परिजनों और पुरजनों से बड़ी ही आत्मीयता और भावुकता से विदा ले रही थीं। उनकी लोकप्रियता ने राजा निजामशाह को उनके सद्गुणों का प्रमाण दे दिया था।

सलकनपुर से गिन्नौरगढ़ के रास्ते में पड़ने वाले सभी देव स्थानों पर रीति-रिवाज के अनुसार दर्शन-पूजन कर बारात गिन्नौरगढ़ आ गई। निजामशाह की बड़ी रानी ने अपनी प्रजासहित नववधू का अभूतपूर्व स्वागत किया। इसका कारण महाराज निजामशाह का संवेदनशील प्रशासन और कुशल व्यवहार तो था किन्तु राजकुमारी कमलापति के सद्गुणों की ख्याति भी उनसे पहले गिन्नौरगढ़ पहुँच चुकी थी। प्रजा को इस बात का संतोष था कि अब उनके राजा को एक दूरदर्शी सलाहकार और जीवनसाथी मिल गया है। वे सभी कमलापति के कुशल प्रशासन और प्रबंधन से परिचित थे। सलकनपुर के जनोन्मुख शासन का श्रेय उन्हें ही दिया जाता था।

राजकुमारी कमलापति अब महारानी कमलापति होकर शीघ्र ही गिन्नौरगढ़ के जनमानस में रच-बस गईं। इस संबंध ने सलकनपुर और गिन्नौरगढ़ का पृथक राज्यों का बोध ही समाप्त कर दिया। दोनों ही राज्यों की प्रजा के लिए अब निजामशाह राजा थे और कमलापति महारानी।

इस विवाह से वैसे तो सभी प्रसन्न थे किन्तु आलमशाह ने इसे अपनी पराजय माना और अपने आपको मदिरा और व्यसनों में और भी डुबो लिया। यह विवाह उसे अपने पौरुष और मान पर आघात सा लगा। उसने गिन्नौरगढ़ से अपने सभी संबंध विच्छेद कर लिए थे।

कमलापति का सौंदर्याकर्षण उसे बेचैन किए ही रहता था ऊपर से अब निजामशाह के प्रति बैर ने भी उसकी नींदें हराम कर दी थीं।

3

विवाह के कुछ दिनों बाद रानी कमलापति ने भोजेश्वर शिवालय के दर्शन और भोजताल भ्रमण की इच्छा व्यक्त की। राजा निजामशाह ने रानी की इच्छानुसार व्यवस्था करने का आदेश दिया। वे प्रायः गिन्नौरगढ़ से उत्तर दिशा में स्थित भोजताल के पास शिकार खेलने जाया करते थे। वहाँ बाघों और अन्य जंगली पशुओं की बहुतायत थी। शिकार आसानी से मिल जाते थे। स्वयं राजा भी रानी कमलापति को प्रवास पर ले जाना चाहते थे। रानी ने दुलारी को भी साथ चलने के लिए कहा। सभी सुविधाओं से युक्त होकर कुछ परिचारिकाओं और सैन्य टुकड़ी सहित सभी ने भोजताल की ओर प्रस्थान किया।

मार्ग में रात्रि विश्राम हेतु आशापुरी के निकट पड़ाव डाला गया। राजा निजामशाह दिनभर की थकान दूर करने के लिए अपने शयनागार में थे और रानी कमलापति अपनी प्रिय सखी दुलारी के साथ शिविर के पास ही बैठकर अलाव ताप रही थीं।

"कल हम भोजताल पहुँच जाएँगे, दुलारी।", रानी कमलापति ने कहा।

"भोजताल बहुत बड़ा है न, महारानी जी ? कृपया इस बारे में कुछ बताइए न।", दुलारी ने प्रेमपूर्वक आग्रह किया।

"सखी ! इतिहास का ठीक-ठीक पता तो हमें भी नहीं है किन्तु कहते हैं, लगभग सात सौ वर्ष पहले मालवा के परमारवंशीय महान राजा भोज ने इस ताल का निर्माण करवाया था। उस समय विंध्याचल पर्वत के दक्षिण का क्षेत्र नर्मदा नदी तक उनके राज्य का हिस्सा था। कुछ लोगों का कहना है कि उन्होंने अपने राज्य की पूर्वी सीमा को सुरक्षित रखने के लिए इस विशाल ताल का निर्माण करवाया था। किन्तु यह भी किंवदंती है कि एक बार महाराज भोज किसी असाध्य चर्मरोग से पीड़ित हो गए। एक संत ने उन्हें उपचार बताया कि तीन सौ पैंसठ जलधाराओं को तीन सौ पैंसठ दिनों में जोड़कर एक विशाल और पवित्र जलाशय बनाएँ और उसमें एक विशेष मुहूर्त में स्नान करें तथा नित्य शिव पूजन करें तो यह रोग ठीक हो जाएगा। उनकी बात मानकर राजा ने अपने गुप्तचरों को ऐसे स्थान की खोज में भेज दिया। इन्हीं गुप्तचरों ने वेत्रवती (बेतवा) नदी पर स्थित इस घाटी का पता लगाया था। लेकिन उन्हें यह जानकर दुख हुआ कि वहाँ केवल तीन सौ उनसठ स्त्रोतों का जल ही एकत्रित होता था।", रानी बताते-बताते कुछ विचारने लगीं तो दुलारी बाई से रहा नहीं गया।

"फिर राजा भोज का रोग ठीक नहीं हुआ क्या, महारानी जी?"

रानी मुस्कुरा दीं और बोलीं, "घाटी के पास ही एक गोंड मुखिया रहता था। कालिया सिंह उसका नाम था। उसने परमार राज्य के अधिकारियों को एक ऐसी नदी की जानकारी दी जिसमें पाँच स्त्रोतों से जल आकर मिलता था। अब जलधाराओं की संख्या तीन सौ चौसठ हो गई थी। एक और जलधारा को खोजते हुए उसने दो पहाड़ियों के बीच से पानी बहते हुए देखा। उसने बाँध बनाकर पानी की धारा रोक दी। इसे मिलाकर संत द्वारा बताई तीन सौ

पैंसठ की संख्या पूरी हो गई। इसी गोंड मुखिया के नाम पर उस नदी का नाम कालियासोत रखा गया। परंतु...”

“परंतु क्या महारानी जी? अब भला क्या अड़चन थी?”, दुलारी की जिज्ञासा और बढ़ी।

“महान व्यक्तियों के जीवन में चुनौतियाँ भी महान आती हैं। वेत्रवती का जल उस बड़ी घाटी को भरने में पर्याप्त नहीं था। इसलिए नदी का प्रवाह रोकने के लिए भोजपुर में पत्थरों से एक बड़ा और मजबूत बाँध बनवाया गया। दूसरी ओर से इस जल को रोकने के लिए जलाशय के उत्तर में मिट्टी का एक बाँध और बनवाया गया जिससे समुद्र जैसा विशाल जलाशय बन गया। बाद में महाराज भोज के नाम पर इसे भोजताल कहा जाने लगा जो हमारे गिन्नौरगढ़ के अधीन आता है।” कहते हुए रानी के चेहरे पर गौरव और संतोष था।

“तो महाराज भोज स्वस्थ हुए या नहीं?”, अबकी बार दुलारी के स्वर में झुंझलाहट सी थी।

“हाँ दुलारी बाई, उस ताल के जल में स्नान कर आपके महाराज भोज स्वस्थ हो गए। और इसी प्रसन्नता में उन्होंने भोजपुर नाम के स्थान पर एक विशाल शिव मंदिर का निर्माण कराया जो यहाँ से कुछ ही कोस दूर है। हम कल ही उस शिवालय के दर्शन करेंगे।”, कहकर रानी कमलापति ने आकाश की ओर देखा। रात्रि का दूसरा पहर समाप्त होने को था। वे बोलीं, “आओ दोनों विश्राम कर लें। हमें कल अधिक लंबी यात्रा करनी है।”

दुलारी बाई ने रानी कमलापति को यथेष्ट अभिवादन किया और शुभ रात्रि कहकर अपने शिविर में चली गई।

प्रातः स्नानादि से निवृत्त होकर यात्रा पुनः आरम्भ की गई। दोपहर तक वे भोजेश्वर मंदिर के प्रांगण में खड़े थे जो एक विशाल चबूतरे जैसा था। रानी कमलापति की दृष्टि बारीकी से प्रत्येक दृश्य का निरीक्षण कर रही थी। चबूतरे पर सीधे ही मंदिर का गर्भगृह बना हुआ था जिसका द्वार अत्यंत विशाल था। रानी ने अनुमान लगाया, द्वार कम से कम बीस हाथ ऊँचा होगा। प्रवेश करते समय दीवार पर दृष्टि गई। उस पर अप्सराएँ, शिवगण और देवनदियाँ अंकित थीं। मंदिर की दीवारें बड़े-बड़े बलुआ पत्थरों से बनी थीं। उनका ध्यान इस बात की ओर गया कि दीवार के पत्थरों में कोई जोड़ने वाला पदार्थ या लेप नहीं दिख रहा था। गर्भगृह की उत्तरी, दक्षिणी और पूर्वी दीवारों में तीन गवाक्ष बने हुए थे किन्तु ये बहुत ऊँचाई पर और दिखावटी से थे। इनकी कोई कार्यात्मक उपयोगिता समझ नहीं आई किन्तु ये सादी दीवारों की नीरसता को विराम दे रहे थे। कदाचित इन्हें केवल सजावट के रूप में बनाया गया था।

अब रानी कमलापति ने मंदिर के गर्भगृह में प्रवेश किया जिसमें विशाल शिवलिंग स्थापित था। कहते हैं यह शिवलिंग दुनिया का सबसे बड़ा शिवलिंग है। इसे एक के ऊपर एक जुड़े तीन चूनापत्थर खंडों से बनाया गया था जो ग्यारह हाथ चौड़ी वर्गाकार जलहरी पर स्थापित था। जलहरी सहित शिवलिंग की ऊँचाई चौबीस हाथ रही होगी। सम्पूर्ण

गर्भगृह की गुम्बदाकार छत चार मजबूत खंबों पर टिकी थी। इस दृश्य ने रानी कमलापति को कुछ चौंका सा दिया। उन्होंने सुना था, गुम्बदाकार इमारतें मुग़ल स्थापत्य कला की अपनी विशेषता हैं। किन्तु यह मंदिर तो मुसलमानों के आक्रमण से बहुत पहले बनाया गया था। उन्हें अपने देश के वास्तु, स्थापत्य और शिल्पियों की कला पर अभिमान हो आया।

अपने हृदय में श्रद्धा और समर्पण लिए कमलापति ने दोनों हाथ जोड़कर शिवलिंग के सामने अपना सिर नवा दिया। अपनी प्रजा की समृद्धि और राजा की कुशलता की प्रार्थना की। निकट ही खड़ी दुलारी बाई आँखें मूँदे कोई स्तोत्र बुदबुदा रही थी। राजा निजामशाह हाथ जोड़े मौन खड़े थे।

रानी कमलापति का मन मंदिर के वास्तुशिल्प से भर नहीं रहा था। उन्होंने अपनी गर्दन घुमाकर गर्भगृह का एक बार फिर निरीक्षण किया। चारों विशाल शीर्ष स्तंभ उमा-महेश्वर, लक्ष्मी-नारायण, ब्रह्मा-सावित्री और सीता-राम की सुंदर प्रतिमाओं से अलंकृत थे। वे मंदिर के गर्भगृह से बाहर आईं। इस बार उनका ध्यान गर्भगृह के द्वार की ऊँचाई पर गया जो बाईस-तेईस हाथ से कम नहीं थी। चौड़ाई लगभग पाँच हाथ। हिन्दू मंदिरों में तो द्वार छोटा बनाया जाता है फिर इस मंदिर का द्वार इतना विशाल और भव्य बनाए जाने के पीछे क्या कारण हो सकता है? रानी विचार कर रही थीं।

द्वार के बाहर खड़े होकर उन्होंने भीतरी नक्काशीदार छत को फिर देखा जो अधूरी ही बनी थी और चार अष्टकोणीय स्तंभों पर टिकी थी। रानी ने एक बार पुनः शिवलिंग को गौर से देखा। बेलनाकार शिवलिंग ऐसे चमक रहा था मानो किसी धातु से बना हो। सैकड़ों वर्ष पुराने पत्थर में इतनी चमक! आँखों पर विश्वास नहीं होता था। इतना चमकाने के लिए पत्थर को किसी विशिष्ट यंत्र से बहुत घिसना पड़ा होगा। किन्तु उस युग में ऐसे यंत्र कैसे बनाए गए होंगे? और यदि तब ये यंत्र बनाना संभव था तो यह तकनीक आखिर खो कैसे गई? इस तकनीक से तो बड़ी-बड़ी तोपें भी बनाई जा सकती थीं जो विधर्मियों के किलों को एक क्षण में तहस-नहस कर देतीं। फिर क्या कारण था जो इस देश ने इतने भव्य और उन्नत तकनीक के मंदिर तो बनाए किन्तु अस्त्र-शस्त्र में पिछड़ता रहा? क्या हमारी अहिंसा की नीति ने आत्मसुरक्षा का भाव भी तिरोहित कर दिया था? क्या उस कला और विज्ञान का गौरव फिर नहीं लौट सकता? क्या हमें अस्त्र-शस्त्रों के लिए विधर्मियों पर ही निर्भर रहना होगा? किन्तु यह अस्त्र तो हमारे शत्रु के पास हैं। वह भला हमें ये क्यों देगा? हम अपने ही देश में इनका आविष्कार और उत्पादन क्यों नहीं कर सकते? रानी के विचारों का प्रवाह वेत्रवती नदी के वेग से भी तेज हो गया था।

मंदिर के निर्माण हेतु इतने बड़े पत्थर भला किसप्रकार उठाकर रखे गए होंगे? रानी ने स्वयं से प्रश्न किया। फिर दृष्टि मंदिर के उत्तर-पूर्व दिशा की ओर गई। एक ढलान जैसी दिखाई दी। निश्चय ही इन भारी पत्थरों को इसी ढलान से चढ़ाकर चबूतरे तक लाया गया होगा। किन्तु इसके लिए भी तो बहुत बल की आवश्यकता पड़ी होगी। क्या वे लोग इतने

बलिष्ठ थे अथवा उनके पास इस कार्य के लिए भी कोई यंत्र होगा?

इधर रानी का मन कई प्रश्नों के उत्तर खोजने मे लगा था। उधर राजा निजामशाह और दुलारी बाई अभी मंदिर के भीतर पूजा-अर्चना में व्यस्त थे। कमलापति को जैसे किसी और प्रमाण की खोज थी। वे कुछ ढूँढती हुई सी मंदिर के चबूतरे के चारों ओर विचरण कर रही थीं। अचानक उनकी दृष्टि एक चट्टान पर उत्कीर्ण रेखाचित्र पर गई। ध्यान से देखने पर स्पष्ट हुआ कि यह मंदिर निर्माण योजना का चित्र है। इसमें मंदिर का भूविन्यास, ऊर्ध्वविन्यास, स्तम्भ और अर्धस्तम्भ, शिखर एवं कलश, चट्टानों की सतह पर आशुलेख की तरह उत्कीर्ण किए गए थे। इसका अर्थ हुआ कि प्राचीन शिल्पियों की वास्तु संकल्पना हमारी कल्पना से कहीं अधिक विकसित थी। कदाचित पुराणों में वर्णित भगवान विश्वकर्मा और मय आदि दानवों की कहानियाँ सत्य हों!

रानी कमलापति इसी वैचारिक उधेड़बुन में रमी हुई थीं कि दुलारी ने उनका ध्यान भंग किया, "लीजिए महारानी जी ! आप यहाँ पत्थरों में महाराज का चेहरा निहार रही हैं और वहाँ महाराज की आँखें आपको देखने के लिए पथराई जा रही हैं। चलिए ! प्रस्थान की तैयारी हो चुकी है।"

रानी कमलापति ने कोई उत्तर नहीं दिया, बस दुलारी के साथ चल पड़ीं। अपनी बग्घी पर चढ़ने से पहले उन्होंने मंदिर की ओर मुख कर सबसे पहले बड़ादेव-महादेव शिव को नमन कर वेत्रवती नदी की अविरल धारा को प्रणाम किया। मंदिर को बनवाने वाले राजा भोज के संकल्प और मंदिर बनाने वाले शिल्पी और कामगारों के श्रम ने रानी के हृदय को श्रद्धावनत कर दिया।

रानी कमलापति बग्घी में बैठ गईं, दुलारी भी साथ थी। महाराज घोड़े पर आगे-आगे जा रहे थे। जब बग्घी आगे बढ़ी तो वेत्रवती के किनारे अनेक पत्थर बिखरे दिखाई दिए। दुलारी ने महारानी से पूछा, "यह पत्थर यहाँ क्यों बिखरे पड़े हैं? लगता है जैसे कभी किसी संरचना के अंग रहे हों।"

"सुना है, यहाँ एक बाँध था सखी! ये पत्थर उसी विशाल और मजबूत बाँध के अंग थे जो वेत्रवती के जलप्रवाह को भोजताल में रोके रखने के लिए बनाया गया था। जब भोजताल बनकर निर्मित हुआ था तब उसका जलीय क्षेत्र यहीं से आरंभ हो जाता था। हमसे तो इतने विशाल जलाशय की कल्पना भी नहीं की जाती।"

"इतना मजबूत बाँध आखिर टूट कैसे गया, महारानी जी?"

"टूटा नहीं सखी, तोड़ दिया गया। आज से कोई ढाई-तीन सौ वर्ष पहले मालवा के शासक होशंगशाह ने तुड़वा दिया था। कहते हैं, उसकी बेगम को दुर्लभ प्रकार का ज्वर हो गया था। हकीमों ने कहा, ताल के जल में अनेक प्रकार के कीट-पतंगे उत्पन्न होते हैं। इन्हीं में से किसी के काटने से ज्वर आया है। उस दुर्मति ने बाँध तोड़ने का आदेश दे दिया। कहा जाता है, उसके सैनिकों को बाँध तोड़ने में पूरे तीन महीने लगे और ताल को पूरा सूखने में

तीन से अधिक वर्ष लगे। होशंगशाह ने यह बाँध तो तुड़वा दिया किन्तु एक अन्य मिट्टी का बाँध न जाने क्यों छोड़ दिया था। उसके कारण एक छोटा जलाशय शेष रहा गया। आज यही भोजताल कहलाता है। कहते हैं अपने मूल सरूप में भोजताल अब शेष बचे जलाशय से चालीस गुना बड़ा था। यह छोटा सा जलाशय इतना विशाल है तो वह पूर्ण जलाशय कैसा रहा होगा, सोचकर ही अचरज होता है।"

"ताल का जल सूखने के बाद मुक्त हुई भूमि तो बहुत उर्वर होती है न महारानी जी ?"

"हाँ! तभी तो हमारे राज्य में सबसे अधिक उत्पादन और राजस्व इसी क्षेत्र से प्राप्त होता है। जल सूखने से अनेक छोटे-बड़े द्वीप निकल आए थे। इनमें से सबसे बड़ा द्वीप अब मंडीद्वीप कहलाता है।"

यात्रा के दौरान रानी कमलापति से दुलारी अनेक विषयों पर प्रश्न करती रही। रानी बड़े ही धैर्य से उन सब प्रश्नों के उत्तर दे रही थीं। दिन ढलने तक वे सब भोजताल के उत्तरी छोर पर पहुँच गए। सैनिक और परिचारक पड़ाव डालने और रात्रि-विश्राम की व्यवस्था में व्यस्त हो गए। रानी उस विशाल ताल के उत्तरी छोर पर खड़ी थीं। इतनी विशाल जलराशि देख रानी मुग्ध हो गईं। फिर अपने दाहिनी ओर मुड़ी तो सूरज को पश्चिम की पहाड़ियों पर विराजमान पाया। चोटी पर विश्राम करता सूर्य स्वप्नलोक गमन की तैयारी में था। इस मनोरम दृश्य को देख उनका मन प्रफुल्लित हो रहा था। दिनभर की यात्रा की थकान मानो घुलती रही। ताल के आस-पास का वातावरण और यह मनोहारी दृश्य नवस्फूर्ति प्रदान करने वाले थे। रानी ने मन ही मन निश्चय किया, जीवन के कुछ वर्ष यहीं प्रकृति की गोद में अवश्य बिताऊँगी।

पीछे खड़े निजामशाह ने जैसे उनका मन पढ़ लिया हो, बोले, "यदि आपकी इच्छा हो तो यहाँ आपके लिए एक भव्य महल के निर्माण की आधारशिला रखी जाए।"

निजामशाह ने जैसे उनके मन की बात कह दी थी। आभार से आप्लावित मुस्कान बिखरी और सहसा ही कहीं खो गई, "किन्तु महाराज! इस समय गिन्नौरगढ़ आर्थिक संकट से जूझ रहा है। जनता के हित में अनेक कार्य करने शेष हैं। ऐसे में महल के निर्माण में बहुत धन का नाहक ही व्यय होगा।"

"प्रिय कमल! राजा सम्पूर्ण राज्य का गौरव होता है। उसके वैभव के मूल्य को केवल उपभोगवादी दृष्टि से नहीं देखा जाना चाहिए अपितु राजा का वैभव तो सारी प्रजा के गौरव का कारण होता है। यहाँ निर्मित महल न केवल हमारे प्रेम की अमिट निशानी होगा बल्कि भविष्य में भोजताल का यह महल और गढ़ हमारे राज्य की सुदूर उत्तर-पश्चिमी राजधानी भी होगा।"

निजामशाह के स्वर में संकल्प की दृढ़ता थी। कमलापति को इस समय उनसे तर्क करना उचित नहीं लगा। वे मौन रह गईं लेकिन तब तक दुलारी निकट आ चुकी थी। उसने निजामशाह का महल निर्माण का संकल्प सुन लिया था। बोली, "वाह महाराज! किन्तु इस

महल का नाम हमारी महारानी जी के नाम पर रखिएगा। रानी कमलापति महल।"

सुनकर निजामशाह ने मुस्कुराकर कहा, "अवश्य दुलारी बाई!"

अगले दिन रानी कमलापति जल्दी उठ गईं। वातावरण में ठिठुरन आज कुछ बढ़ गई थी। ताल के पवित्र शीतल जल में स्नान कर पूजा-ध्यान किया और किनारे पर विचरण करने लगीं। चारों ओर प्राकृतिक छटाएँ बिखरी पड़ी थीं। ऐसा अनुपम सौन्दर्य भला किसका मन न मोह लेगा। इस स्थान पर आते ही उन्हें अनुभव हुआ कि अब तक वे किस सौन्दर्य से वंचित रही थीं।

मन में विचार उमड़ने लगे। यहाँ बनेगा कमलापति महल जिसके झरोखों से भोजताल का मनोरम दृश्य दिखाई देगा। संभव हुआ तो कम से कम सात मंज़िला! लखौरी ईंटों से निर्मित! अपने में भव्य और अप्रतिम! जो गोंडवाना के गिन्नौरगढ़ राज्य का वैभव सदियों तक अमर रखेगा। नियति का आदेश हुआ तो यहाँ अपने राज्य की ग्रीष्मकालीन राजधानी बनाएँगे। ग्रीष्म ऋतु में सायंकाल जल से शीतलता लेकर पवन महल के झरोखों से भीतर प्रवेश करेगी। अंतःपुर तक शीतलता से भर उठेगा।

कई प्रकार के जलीय जीव, जन्तु और वनस्पतियाँ क्षेत्र को विविधता प्रदान कर रही थीं। कुछ तो ऐसी जो कमलापति ने भी पहली बार ही देखी थीं किन्तु ताल के रख-रखाव के अभाव में झाड़ियाँ ताल की सीमा का अतिक्रमण करती आती थीं। ठीक वैसे ही जैसे विधर्मी आक्रांता पवित्र भारत भूमि को अपने पाँवों तले रौंदते बढ़े आए थे। उनके मन में भाव उठा, महल के निर्माण के साथ ही ताल के किनारों से खरपतवार हटाने का काम भी अविलंब आरंभ करवाना होगा।

"हमें नहीं जगाया, महारानी कमल ! सारे सौन्दर्य का आनंद स्वयं ही ले लेना चाहती हैं आप?", राजा निजामशाह के उलाहना भरे बनावटी स्वर ने कमलापति को विचारों की शृंखला से स्वतंत्र कर दिया।

"हमने सोचा, आप थके हुए हैं। अधिक से अधिक आराम कर लें जिससे राज-काज में चुस्ती-फुर्ती बनी रहे।", रानी ने भी परिहास किया।

"हम तो इसलिए आराम करते हैं कि आपकी सेवा में कोई व्यतिरेक न आने पाए। फिर यूँ भी आपके सौन्दर्य के सामने हमें तो इस जंगल, पहाड़ और ताल में कोई सुंदरता दिखाई नहीं देती।", निजामशाह की बात सुन रानी ने केवल मुस्कुरा दिया। बात पलटते हुए पूछा,

"कब जागे हैं, महाराज नींद से?"

"बड़ी देर हुई। अपने शिल्पियों को संदेश भेज दिया है। वे कल दोपहर तक यहाँ पहुँच जाएँगे और शीघ्र ही रानी कमलापति महल के निर्माण का कार्य शुरू हो जाएगा। आपको जलविहार करवाने के लिए पास ही के गाँवों के गोंड-मल्लाहों को संदेश भेज दिया है। वे अपनी नावें लेकर आते ही होंगे।"

रानी ने आगे होते हुए कहा, "चलिए ! स्नानादि से निवृत्त होकर कुछ जल-पान कर लें।"

दोनों अपने शिविर की ओर चल पड़े। भोजन होने तक दिन चढ़ आया था। धूप की चुभन को देखते हुए निर्णय हुआ कि दूसरे पहर के बाद नावों से भोजताल का भ्रमण किया जाएगा।

सूरज की किरणें तिर्यक हुईं तो निजामशाह और रानी कमलापति एक बड़ी सी नाव पर बैठकर भोजताल के भ्रमण पर निकले। उनके साथ दुलारी के अतिरिक्त दो मल्लाह भी थे। उनमें से एक इस क्षेत्र का जानकार और शिकारियों का सरदार था। काला रंग, तगड़ा मेहनत से तराशा शरीर, खिचड़ी बाल और बेडौल दाँत। सिर पर सफ़ेद रंग का धोती जैसा कपड़ा जो केवल माथे को ही ढँकने के काम में लिया गया था। पूछने पर उसने अपना नाम पूरन बताया।

नाव दक्षिण दिशा की ओर बढ़ रही थी। काफी आगे जाने पर अनेक प्रकार के दुर्लभ पक्षियों के झुंड दिखाई दिए। कौतूहल बढ़ा तो दुलारी से रहा नहीं गया। उसने पूछ लिया,

"हें! ऐसे पक्षी तो हमने अपने जीवन में कभी नहीं देखे। ये तो अतिदुर्लभ प्रजाति के जान पड़ते हैं।"

पूरन मानो इसी अवसर की प्रतीक्षा कर रहा हो। झट से बोल पड़ा, "आप उचित ही समझी हैं, मुहतरमा जी ! यह पंछी पूरे देस में सिरफ यहीं पाए जाते हैं और वो भी बस जाड़े के कुछ महीनों में।"

दुलारी को पूरन का सम्बोधन अटपटा लगा लेकिन 'जी' ने आपत्ति का कोई कारण भी नहीं छोड़ा था। हाँ, राजा-रानी दोनों एक-दूसरे को कनखियों से देखकर अपनी हँसी दुलारी से छुपा रहे थे। उसने फिर प्रश्न किया, "किन्तु जाड़े के बाद ये सब कहाँ चले जाते हैं?"

"वहीं, अपने घर। जहाँ से ये आते हैं।", हैं-हैं-हैं करके पूरन ने अपने बड़े और पीले दाँत दिखा दिए जो चिलम के धुंए से रच गए थे। कहते-कहते उसे अनुभव हुआ जैसे वह कुछ गलत बोल गया हो। जल्दी से गलती सुधारने के लिए उसने बात आगे बढ़ाई,

"माफ करें, रानी जी! मेरा कहने का मतलब था कि यह पंछी पूरी धरती का चक्कर काटकर कौन देस से आए हैं, यह भला कौन जाने ? लेकिन ये बात सच्ची है कि इन्हीं दो-तीन महीनों के लिए ये इधर आते हैं।"

"हुंह! पूरी धरती का चक्कर काटकर ! कुछ भी।", दुलारी को धरती का चक्कर काटने वाली बात तनिक न सुहाई।

"नहीं रानी जी! एक बार एक संत जी यहाँ आए थे तब उन्हीं ने बताया था कि धरती के सबसे दूर के छोर से चलकर ये यहाँ पहुँचते हैं।"

"और रस्ता नहीं भटक जाते होंगे ?", दुलारी ने तर्क किया।

"अपने ढोरों को गर्मियों में जंगल छोड़ आते हैं कि नहीं। और दो-तीन महीने बाद जब पानी बरसता है तो वो घर आ जाते हैं। जब गैया रस्ता नहीं भटकती तो पंछी भला क्यों भटकेगा।", पूरन की बात में गहरा तर्क था। दुलारी चुप हो गई। लेकिन पूरन कहता रहा,

“वैसे भी रस्ता भटकने का जिम्मा तो हम इन्सानों का है। पसू-पंछी में ये सिफत कहाँ होती है।”

“अच्छा पूरन भैया! इन पंछियों के विषय में कुछ और भी बताइए न।” अब रानी कमलापति ने उसी के लहजे और भाषा में पूछने का प्रयास किया।

“हाँ-हाँ, क्यों नहीं, महारानी जी। देखिए, कुल दो तरह के पंछी आते हैं यहाँ। एक वो जो दिन-रात जल में रहते हैं और दूजे जो धरती पर रहते हैं।”

नाव छोटी-छोटी लहरों से अठखेलियाँ करते हुए आगे की ओर बढ़ती जा रही थी। पक्षियों के एक झुंड की ओर इशारा करके पूरन चिल्लाया, “वह देखिए, महारानी जी! वो रहा बरफ का सारस। बिलकुल बरफ के जैसा भूरा भक्क! लेकिन उसके पंखों के किनारे, एकदम काले धुस्स! चोंच और पैरों का रंग गुलाबी। ये बहुत दूर से आते हैं यहाँ।”

“और वो रही कंघी वाली बत्तख। सफ़ेद पेट और नीले स्याह सुंदर पंख। चौड़े मजबूत पंजे, शिकार को पकड़े तो छूट ही न सके। इसके सिर के बाल तो देखिए! आधे काले, आधे सफ़ेद, यानी चितकबरे। ऐसा लगता है जैसे घर से ही कंघी करके आई है।”

रानी कमलापति के साथ निजामशाह भी पूरन के पक्षी विवरण का आनंद ले रहे थे। कुछ और आगे बढ़ने पर एक और झुंड दिखाई पड़ा। इस बार निजामशाह से रहा नहीं गया। पूरन की चुटकी लेते हुए उन्होंने पूछा, “और उन पक्षियों को क्या कहते हैं? वो बड़े गुलाबी रंग के बड़े पेट वाले।”

“वो ब्राह्मणी बतख है महाराज ! आगे के पंख सफ़ेद और पीछे के काले। गहरे गुलाबी रंग का बड़ा सा पेट बिलकुल अपने पंडित जी जैसा।”, कहता हुआ पूरन हें-हें-हें कर हँसा।

निजामशाह और रानी एक बार फिर उसके विवरण पर मुस्कुराए। बात पलटते हुए निजामशाह ने पीले-नारंगी पक्षियों की ओर इशारा करते हुए पूछा, “और वे ?”

“वो थैली वाले जलपंछी हैं, महाराज। पीले-नारंगी गले की थैली वाले।”, पूरन ने उत्तर दिया।

अब शाम ढलने को थी। निजामशाह ने आदेश दिया तो मल्लाह ने नाव वापस पड़ाव की ओर मोड़ दी। लौटते समय पूरन को दूर से शुतुरमुर्गों का एक जोड़ा दिखाई दिया। दुलारी की ओर देख बोला, “आप किस्मतवाली हैं, मुहतरमा जी! ये गुलाबी पाँवों और गुलाबी चोंच वाले शुतुरमुर्ग तो सुबह ही दिखते हैं। आज पता नहीं शाम को कैसे सैर पर आ गए।”

पूरन के अलावा कोई उन्हें ठीक से नहीं देख सका। अँधेरा घिरने लगा था। नाव किनारे पर आकर लग गई। सब उतरकर अपने विश्राम शिविर में चल दिए। रानी कमलापति पूरन के भोजताल संबंधी ज्ञान और जानकारी से अत्यंत प्रसन्न थीं। उन्होंने अपने गले में पहनी मोतियों की माला उतारकर पूरन की ओर बढ़ा दी। उसे इस ईनाम की उम्मीद नहीं थी। वो सिर झुकाकर अपने घुटनों पर बैठा और अपने हाथ फैला दिए। माला लेकर उसने रानी कमलापति को कृतज्ञता से प्रणाम किया।

रात्रि का पहला ही पहर था। शिविर में रानी कमलापति, निजामशाह के सिरहाने बैठी थीं। दिन भर के प्राकृतिक दृश्यों से उनका मन अब तक स्फूर्त और प्रसन्न था। वे बादाम के तेल से निजामशाह के सिर की मालिश कर रही थीं। निजामशाह ने रानी से पूछा, "यदि आप आज्ञा दें तो हम कल आखेट खेल आएँ ?"

"क्षमा कीजिए, महाराज! हम कल से यहाँ हैं। हमें अब तक किसी हिंसक पशु के आतंक की कोई सूचना नहीं मिली है। केवल आमोद के लिए आखेट करना तो उचित नहीं है।"

"आखेट राजों-महाराजों की वीरता का परिचायक होता है।"

"होता होगा। हमारे समाज में दुर्मान्यताओं का अभाव थोड़े ही है। ऐसी मान्यताएँ गढ़ने वाले भी तो राजे-महाराजे ही थे। किन्तु सच्ची वीरता किसी जीव के प्राण लेने में नहीं बल्कि उसके प्राणों की रक्षा करने में है।"

"यदि हिंसक पशुओं का शिकार नहीं किया गया तो वे जंगल के दूसरे पशुओं और ग्रामीणों का जीवन दूभर कर देते हैं, कमल!", जैसे निजामशाह रानी कमलापति को मनाने का प्रयास कर रहे थे।

"परंतु ऐसे पशुओं की आड़ में अनेक निरपराध पशुओं की भी हत्या होती है, महाराज!"

"कहते हैं यदि शेर आदमखोर हो जाए तो उसे मार देना चाहिए। आपको ऐसा नहीं लगता?"

"केवल उसी शेर को जो आदमखोर हो गया है। और वह भी पूरे प्रमाणों के साथ।"

लेकिन निजामशाह भी जल्दी हार मानने वाले नहीं थे। बोले, "तो हम भोजताल में मछलियों का शिकार तो कर सकते हैं न? वे तो दक्खिन भारत के ब्राह्मणों का भी प्रिय भोजन हैं।"

"क्यों महाराज! मछलियों में प्राण नहीं होते हैं क्या?", रानी ने हँसते हुए कहा।

"अच्छा! यदि प्राणों का प्रश्न है तो प्राण तो पौधों और वृक्षों में भी होते हैं। कृषि कार्य में भी तो ढेर हिंसा होती है। उसका पातक न लगता होगा?", निजामशाह इसबार भरपूर तर्क ढूँढ लाए थे। लगा जैसे अब रानी मौन रह जाएँगी।

"महाराज! कोई कर्म अपने आप में शुभ अथवा अशुभ नहीं होता है। उसका उद्देश्य ही उसे शुभ या अशुभ बनाता है। कृषक का उद्देश्य लाखों जनता के उदरपालन हेतु अन्न उपजाने का होता है। खेत में रहने वाले असंख्य जीव इस अनुक्रम में मारे जाते हैं तो इसका पातक उसके सिर नहीं जाता। यही गीता का भी सार-संक्षेप है।", रानी कमलापति ने अपनी स्मृति एकत्रित कर अपनी बात आगे बढ़ाई, "जैसे कौरव और पांडव, दोनों महाभारत का एक ही युद्ध लड़े किंतु उनके उद्देश्य अलग-अलग थे। एक पक्ष के लिए युद्ध दूसरों की संपत्ति हड़पने का उपाय था तो दूसरे के लिए धर्म की स्थापना का पवित्र साधन।

"जानती हो कमल ! कभी-कभी हमें लगता है, राज-पाट छोड़कर हम आपसे दीक्षा

ग्रहण कर लें। आप ऐसे ही प्रवचन करती रहें और हम सुनते रहें।''

''क्यों हमें पाप में डाल रहे हैं, महाराज! आप हमारे पूजनीय हैं। हम भला आपको कैसे...'', कहते-कहते कमलापति रुक गईं। ''सच कहते हैं, कमल! हमारा मन धरम की बातों में तनिक भी नहीं रमता किन्तु जब आप सरल शब्दों में धरम की विवेचना करती हैं तो लगता है, यह जीवन ही व्यर्थ है। हमें कमण्डल उठाकर हिमालय की ओर निकल जाना चाहिए।''

''हे देवी माँ ! ये हमने आपको कौन सा पाठ पढ़ा डाला ? धर्म का वास्तविक संदेश संसार से पलायन नहीं बल्कि संसार सागर में कमलपत्रवत बने रहना है। जैसे कमल के पत्र जल और कीचड़ में रहते हुए भी उससे अछूते ही बने रहते हैं। और रहा प्रश्न जीवन के व्यर्थ होने का, तो जीवन प्रारम्भ में सभी का व्यर्थ ही होता है, महाराज! मनुष्य को इसे अपने प्रयासों और सद्कर्मों से सार्थक बनाना पड़ता है।'', कमलापति किसी दार्शनिक की भाँति बोल रही थीं।

''अरे बाबा रे! इतना गहन ज्ञान! इस अकिंचन को तो केवल इतना बता दीजिए, हम कल मछलियों का शिकार करें या नहीं? वैसे हम शिकार के विचार से भी गिन्नौरगढ़ से निकले थे।''

रानी मुस्कुराते हुए बोलीं, ''कल आखेट खेल लीजिए। किन्तु यदि हम कभी भारतवर्ष की नीति-निर्माण का अंग बने तो पशु-पक्षियों के आखेट पर कठोर प्रतिबंध अवश्य लगाएँगे।'', रानी कमलापति के लहजा दृढ़ था।

''उस दिन की प्रतीक्षा हम नहीं कर सकेंगे, महारानी! हम तो गिन्नौरगढ़ लौटते ही आखेट पर प्रतिबंध लगाने की मुनादी करवा देंगे। और हाँ! हमने आज और अभी से आखेट न खेलने की शपथ ले ली है।''

रानी कमलापति प्रसन्नता से नम आँखें छुपाते हुए निजामशाह की सीने से लिपट गईं। बाहर सर्दी बहुत बढ़ चुकी थी और रात यौवन के उफ़ान पर थी। हवा के एक तेज झौंके ने शिविर के भीतर का दिया बुझा दिया। भोजताल के तट पर अमर प्रेम की इबारत आकार लेती रही।